ओ३म्
कृण्वन्तो विश्वमार्यम्...

राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा

तिथि–10 जनवरी 2018
सृष्टि संवत्- १, ९६, ०८, ५३, ११८
युगाब्द-५११८, अंक-९३, वर्ष-११
पौष मास, विक्रमी २०७४ (जनवरी 2018)
मुख्य संपादक : हनुमत्प्रसाद 'अथर्ववेदाचार्य'
कार्यकारी संपादक : आचार्य सतीश
सम्पर्क सूत्र: 9350945482
Web: www.aryanirmatrisabha.com
E-mail : krinvantovishwaryam@gmail.com

ऋषि दयानन्द

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

(राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा का मासिक विचार पत्र)

वि जानीह्यार्यान् ये च दस्यवो बर्हिष्मते रन्धया शासदव्रतान्। शाकी भव यजमानस्य चोदिता विश्वेत्ता ते सधमादेषु चाकन॥ -ऋ० १। ४। १०। ३

व्याख्यान-हे यथायोग्य सबको जाननेवाले ईश्वर! आप (आर्यान्) विद्याधर्मादि-उत्कृष्ट-स्वभावाचरणयुक्त आर्यों को [(वि जानीहि)] जानो। (ये च दस्यवः) और जो नास्तिक, डाकू, चोर, विश्वासघाती, मूर्ख, विषयलम्पट, हिंसादिदोषयुक्त, उत्तम कर्म्म में विघ्न करनेवाले, स्वार्थी, स्वार्थसाधन में तत्पर, वेदविद्याविरोधी, अनार्य मनुष्य (बर्हिष्मते) सर्वोपकारक यज्ञ के ध्वंसक हैं, इन सब दुष्टों को आप (रन्धय) (समूलान् विनाशय) मूल-सहित नष्ट कर दीजिए। और (शासदव्रतान्) ब्रह्मचर्य-गृहस्थ-वानप्रस्थ-संन्यासादि-धर्मानुष्ठानव्रतरहित, वेदमार्गोच्छेदक अनाचारियों को यथायोग्य शासन करो (शीघ्र उन पर दण्ड निपातन करो)। जिससे वे भी शिक्षायुक्त होके शिष्ट हों, अथवा उनका प्राणान्त हो जाय, किंवा हमारे वश में ही रहें। (शाकी) तथा [आप ही] जीव को परम शक्तियुक्त शक्ति देने और उत्तम कामों में [चोदिता] प्रेरणा करनेवाले हो। आप हमारे दुष्ट कामों से निरोधक हो। मैं भी (सधमादेषु) उत्कृष्ट स्थानों में निवास करता हुआ (विश्वेत्ता ते) तुम्हारी आज्ञानुकूल सब उत्तम कर्मों की (चाकन) कामना करता हूँ। सो आप पूरी करें।

सम्पादकीय

फूट डालो और राज करो!

प्राचीनकाल के इतिहास को पढ़ने से यह बोध होता है कि हमारे इस राष्ट्र में धर्म केन्द्रीय बिन्दु था, धर्मपूर्वक अर्थ अर्थात् धन का सम्पादन आवश्यक था। धर्मपूर्वक कामनाओं की पूर्ति आवश्यक थी। इन्हीं अर्थ और काम को धर्मानुकुल नियन्त्रित करने हेतु हमारे ऋषियों ने राजनीति का अविष्कार किया अर्थात् राजनीति का सीधा-सीधा कार्य था कि कोई भी प्रजाजन अर्थ की प्राप्ति हेतु, कांमनाओं की सिद्धि के लिए अधर्म का आश्रय न लेवे, किसी प्रकार छल-कपट, द्वेषादि का व्यवहार न करे। पुनःरपि यदि कोई इस प्रकार का व्यवहार करता था तो राजा का धर्म था कि वह उस व्यक्ति या व्यक्तियों के समुह को दण्डित करे, यदि राजा ही धर्म को छोड़कर अधर्माचरण में तत्पर होकर अपनी प्रजा को भी उसी दिशा में प्रवृत्त करने को उद्यत हो, तब प्रजा में विचारशील धार्मिक जन ऐसे राजा को हटाने हेतु नानाविध उपक्रम करते थे और आवश्यकता पड़े तो अपने राजा से श्रेष्ठ अन्य धर्मप्रिय राजा का साथ लेकर भी अधर्म का नाश करते थे। यदि किसी एक शासक के पुरुषार्थ से धर्मसंस्थापना न हो तो अनेक शासकों का सहयोग, यहाँ तक कि चक्रवर्ती सम्राट का भी सहयोग लेना पड़े तो भी लेकर धर्मसंस्थापना आवश्यक थी। सो येन केन प्रकारेण धर्म को स्थापित रखा जाता था। (धर्म का तात्पर्य यहाँ आवश्यक कर्तव्य कर्मो से है।)

किन्तु दुर्भाग्यवश हमारे ही जनों की अज्ञानता, आलस्य के फलस्वरूप कब धर्म के स्थान पर स्वार्थ प्रबल हो गया, कब शाश्वत् सिद्धान्तों को छोड़कर हमारे ही भीतर के लोग नाशवान संसार, नाशवान संसाधनों को मुख्य मानकर व्यवहार में ले आये, कि अपने ही लोगों के राज्यादि नाशार्थ विधर्मी-अधर्मी म्लेच्छों तक को अपने ही देश की सीमाओं में प्रविष्ट करवाकर अपना और अपने ही करोड़ों बन्धु-बान्धवों के समूल नाश का बीजारोपण कर बैठे। फलस्वरूप ही शक आये, हूण आये, यूनानी आये, यवन, मुसलमान, पुर्तगाली, अंग्रेज आये, इन सबने अपने भीतर के कुसंस्कार, कुपरम्पराएं हमारे भीतर उड़ेल दी हमें पता भी न चला और पता चला भी तो रोक न पाये। इसी श्रृंखला में अंग्रेजों ने एक षड्यन्त्रकारी योजना को मूर्त्तरूप दिया-**"फूट डालो और राज करो।"**

अंग्रेज चले गये, किन्तु यह षड्यन्त्र यहीं जड़ें जमाकर बैठ गया, जो आज तक भी न उखड़ा और भविष्य में भी उखड़ने की कोई सम्भावना अभी दिखाई नहीं देती है। अंग्रेजों से काँग्रेस पार्टी में और काँग्रेस पार्टी से देश की सभी राजनैतिक पार्टियों में यह षड्यन्त्र जमा हुआ है जिससे वर्तमान काल में भी यह षड्यन्त्रकारी तत्व समाज के ताने-बाने को नष्ट भ्रष्ट करते रहते हैं। कुछ मुठ्ठीभर लोगों द्वारा किया जाने वाला विषवमन सारे समाज और सारे राष्ट्र को विषैला बना देता है।

शेष अगले पृष्ठ पर

संपादकीय का शेष...

गुजरात के चुवाव में जातिवाद के नाम पर, ऊंच-नीच के नाम पर खूब वोटों की फसल काटी गयी, तदुपरान्त महाराष्ट्र में भी जातिवाद की आग लगाई गयी, जो पहले ही षड्यन्त्रकारी मानसिकता से ओत-प्रोत लोग हैं, कुछ वहीं पर विद्यमान थे और कुछ बाहर से महाराष्ट्र जाकर वातावरण को विषैला बना आये, इसके लिए जहाँ एक ओर अपने स्वार्थ के लिए समाज और राष्ट्र को बेच खाने वाले लोग उत्तरदायी हैं, तो दूसरी ओर हैं हमारे संविधान में प्राप्त अभिव्यक्ति की आजादी का अनुचित लाभ उठाने वाले लोग। इसकी कोई स्पष्ट परिभाषा नहीं है कि किस प्रकार की अभिव्यक्ति की आजादी होनी चाहिए और किस प्रकार की नहीं। परिभाषा स्पष्ट न होने के कारण परिणामस्वरूप आप चाहे झूठ की अभिव्यक्ति करो, चाहे सत्य की अभिव्यक्ति करो, सब बराबर मान लिया जाता है, राजनैतिक लोग ऐसी अभिव्यक्ति की आजादी का लाभ उठाकर कुछ भी बोलते और कुछ भी नारे लगवाते हैं, चाहे उससे मार काट हो, समाज टूटे या नष्ट हो।

एक समय था कि उत्तर प्रदेश की राजनीति में एक राजनैतिक पार्टी ने समाज में जातिवाद का नंगा नाच किया, खूब जातीय दंगे करवाये, खुब जातीय नारे लगवाये-तिलक, तराजू और तलवार...। जब समाज आमने-सामने तलवारें खींचकर खड़ा हो गया तब इसी पार्टी ने ब्राह्मणों (तिलक) के सम्मेलन किये, उन्हें भी अपनी राजनीति का शिकार बनाकर उत्तर प्रदेश पर शासन किया। गुजरात में पटेलों का नेता बनने को हार्दिक पटेल को चेहरा बनाया गया, तब दलित वर्ग के नेता के रूप में जिग्नेश जैसे लोगों ने पटेलों को खूब गालियां दी, चुनाव आये तो "चोर-चोर मौसेरे भाई" वाली कहावत चरितार्थ करते हुए एक पार्टी में जा मिले। अब महाराष्ट्र में मराठा और महार जातियों को लड़ाया गया, लगता है अभी और भी लडाया जायेगा, और चुनाव में कोई नेता बनकर तैयार हो जायेगा। किन्तु ऐसे षड्यन्त्रकारी नेताओं के कारण जिन परिवारों की बर्बादी होती है, जिनके युवक/युवतियां मारे जाते हैं, उनका क्या? वे तो इतिहास बन जाते हैं, सुफल नेताओं को मिलता है, लेकिन समाज में घोला गया विष भीतर ही भीतर फैलता रहता है। प्रश्न उठता है- इन षड्यन्त्रकारियों का समाधान क्या है? समाज में मिले इस विष का निवारण क्या है? और साथ ही साथ इस अनर्गल अभिव्यक्ति का क्या समाधान है? और साथ ऐसी विवेकहीन परम्पराओं का, कथाओं का भी समाधान आवश्यक है, जहाँ से जातिवादी अस्मिता के प्रदर्शन से सदियों से साथ-साथ रहते आये समाज में विद्वेष भड़कता हो, शत्रुता पनपती हो।

पाठक वृदों! विद्या ही वह भेषज् है, भेषज् ही नहीं अमोघ भेषज् है जिससे जातीय अभिमान, जातीय विषक्ता नष्ट हो सकती है। आखिर तनिक सोचिए! कि जब युद्ध अंग्रजों और मराठों के मध्य हुआ, मराठा हार गये, देश गुलाम हो गया, महाराष्ट्र गुलाम हो गया, तब क्या अंग्रेजों ने केवल मराठों पर अत्याचार किये? क्या महार लोगों को गोद में बिठाकर पाला-पोसा होगा? नहीं। अंग्रेजों के लिए कोई ऊंच नहीं था, कोई नीच नहीं था। कोई मराठा नहीं था, कोई महार नहीं था, कोइ स्वर्ण, कोई अस्वर्ण नहीं था। अपितु सभी देशवासी हिमालय से समुन्द्र पर्यन्त सिर्फ और सिर्फ गुलाम थे और गुलामों पर अत्याचार करना वे अपना मौलिक अधिकार समझते थे, परिणात: देश में निवास करने वाली कोई भी जाति फिरंगियों के अत्याचारों से नहीं बची, जिन्होंने अंग्रेजो का साथ दिया उन्हें भी गुलाम ही माना गया और जिन वीरों ने प्रतिरोध किया उन्हें भी गुलाम ही माना गया, बस कुछ ने अपमान के घूँट अपमान सहकर चुपचाप पिये तो कुछ ने प्रतिकार करके किये जाने वाले अपमान की ओर समस्त संसार का ध्यान आकृष्ट करने का प्रयत्न किया।

अत: आइए विद्या रूपी औषध का सेवन अपने समाज और राष्ट्र के निवासियों को तीव्रगति से करवाए! विवेक जाग्रत कीजिए! जिससे सभी एक साथ एक स्वर में कह सकें "वयं तुभ्यं बलिहृत: स्याम" अर्थात् हमें अपने राष्ट्र के लिए धन-सम्पत्ति, संसाधनों और शरीर तक की बली देनी पड़े तो देवें! कभी पीछे न हटें!

आर्य प्रचारक कक्षा (6-7 जनवरी) में आचार्य महेश जी

आर्या प्रचारिका कक्षा (6-7 जनवरी) में आचार्य सुशीला जी

आओ यज्ञ करें!

अमावस्या	17 जनवरी	दिन-बुधवार	मास-माघ	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-उत्तराषाढ़ा
पूर्णिमा	31 जनवरी	दिन-बुधवार	मास-माघ	ऋतु-शिशिर	नक्षत्र-पुष्य
अमावस्या	15 फरवरी	दिन-वीरवार	मास-फाल्गुन	ऋतु-वसंत	नक्षत्र-श्रवण
पूर्णिमा	1 मार्च	दिन-वीरवार	मास-फाल्गुन	ऋतु-वसंत	नक्षत्र-मघा

सती प्रथा : एक विश्लेषण

-आर्य सोनू, कैथल

सती प्रथा हिन्दू समाज में प्रचलित ऐसी प्रथा थी जिसमें पति के मर जाने पर पत्नी जलती हुई चिता में बैठकर सती हो जाती थी। धीरे-धीरे इसके रूप में और परिवर्तन आया और औरतों को सती होने के लिए विवश किया जाने लगा। इच्छा के विरुद्ध भी उन्हें जलती चिता में धकेल दिया जाता था। भारतीय अंग्रेजी समर्थक राजा राममोहन राय व लार्ड विलियम बैन्टिक नामक अंग्रेज के प्रयत्नों से 1829 ई॰ में इस प्रथा को समाप्त कर दिया गया। इसका प्रचलन काल, उसका कारण व अंग्रेजों द्वारा इसकी समाप्ति के उद्देश्य का हम यहाँ विश्लेषण करेंगे।

वैदिक काल-वैदिक ग्रन्थों/महाभारत को छोड़कर, उसमें माद्री को सती होने का वर्णन है। रामायण आदि पढ़ने से विदित होता है कि मूलत: तो यह प्रथा वैदिक नहीं है क्योंकि रामायण आदि में कहीं भी इस प्रथा का उल्लेख नहीं है। उसके शायद यह कारण है- **पहला** तो यह कि महाभारत से कुछ समय पूर्व तक स्त्रियों को बहुत मान आर्यों के द्वारा दिया जाता था, स्त्रियों को सब अधिकार व सम्मान प्राप्त थे जिसके फलस्वरूप मैत्रेयी, गार्गी आदि अनेक विदुषी स्त्रियों का नाम उस काल में पढ़ने-सुनने को मिलता है। **दूसरा** यह कि युद्ध नियम और मर्यादाओं के आधार पर लड़े जाते थे। शत्रु केवल रण में ही शत्रु होता था। अन्यत्र एक दूसरे की बात का मान प्रतिद्वन्द्वी भी रखते थे जैसाकि राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने लिखा है कि- **"प्रतिपक्षियों को भी हमारे सत्य का विश्वास था"**। अत: मर्यादाओं पर आधारित युद्ध में हार हो वा जीत स्त्रियों की अस्मिता पर कोई आंच नहीं आती थी। **तीसरा**- नियोग प्रथा के प्रचलन के कारण विधवा होने पर भी स्त्री सनाथा ही रहती थी। अत: किसी भी कारण से स्त्रियों के सती होने का कोई आधार उपलब्ध नहीं था। जिससे यह प्रथा भी वैदिक काल में नहीं थी।

महाभारत व उसके बाद का काल- उत्तर वैदिक काल में स्त्रियों की स्थिति व सम्मान में परिवर्तन आने लगा। दुर्योधन द्वारा द्रोपदी का सभा में अपमान यह सिद्ध करता है। महाभारत का युद्ध हुआ जिस कारण भव्य भारत की वैदिक व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई। केन्द्रीय शक्ति के कमजोर होने के कारण बार-बार विदेशी लुटेरे भारत पर आक्रमण करते रहे। युद्ध के नियम व मर्यादाएं नष्ट हो चुकी थी। अब जब कभी भी कोई भारतीय नरेश पराजित होता तो विजेता लुटेरों के द्वारा राज्य के साथ-साथ स्त्रियों की अस्मिता को भी लूटा जाने लगा। धीरे-धीरे नियोग प्रथा और विधवा विवाह भी जल्द बन्द हो गया। स्त्री के मान का कोई मोल न रहा। पृथ्वीराज चौहान की मृत्यु के बाद उसकी पत्नी संयोगिता संग जो हुआ वह सर्वविदित है। अत: स्त्रियों के सम्मान की रक्षा हेतु सती नामक प्रथा का प्रचलन शुरु हुआ। उस समय के हिसाब से भी ऐसा करना ठीक नहीं था हालांकि उस समय और कोई विकल्प था ही नहीं। इससे रणवीरों की कुल-लज्जा नष्ट होने की चिन्ता न रहने से युद्धभुमि से लड़-मर सकते थे।

ब्रिटिश काल- लगभग 1600 ई॰ में अंग्रेज व्यापारियों का भारत में आगमन हुआ किन्तु कोई केन्द्रीय शक्तिशाली राज्य न होने के कारण अंग्रेज 1764 ई॰ में बक्सर के युद्ध के बाद भारत सम्राट बन गये। पश्चिमी देशों में प्लेटो व अरस्तु से लकर बहुत काल बाद तक भी विवाह आधारित परिवार नामक संस्था का प्रचलन नहीं था। अब भी पश्चिमी देशों में ऐसी भावना कम है और तलाक का प्रतिशत बहुत उच्च है। वहां लोग (पुरुष व स्त्री) मुख्यत: कामवासना की पूर्ति हेतु ही इकट्ठा रहते हैं। अगर गलती से सन्तान पैदा हो जाए, तो उसको संभालने हेतु कॉन्वेंट नामक संस्था बनाई है। वहां चर्च पादरी को फादर भी इसी कारण कहते हैं, क्योंकि अधिकतर बालकों को असली पिता का ज्ञान ही नहीं होता। स्त्री मताधिकार भी वहां हमारे से बहुत बाद ही आया है। यह भूमिका बान्धने की जरुरत इसलिए पड़ी ताकि अंग्रेजों के द्वारा सती प्रथा निषेध के सही उद्देश्य को समझा जा सके। भारत पर अधिकार हो जाने के बाद अंग्रेजों का यहां स्थाई निवास व व्यवस्था भी शुरू हुई। देश और परिवार से बहुत दूर रहने हेतु उन्हें अपनी व्यवस्था व अपनी इच्छा पूर्ति हेतु कानून बनाए। क्योंकि इतना अधिक समय उनके लिए कामवासना पूर्ति बिना रहना संभव नहीं था। स्त्रियाँ (बाजार) भारत में इस काम हेतु उपलब्ध न थी। सन् 1829 ई॰ में सती प्रथा बन्द कर दी गई। परिणाम यह हुआ कि सती न होने से स्त्रियों को समाज में हेय दृष्टि से देखा जाने लगा और विधवा विवाह था नहीं! बहुत युद्धोपरान्त अंग्रेज जनरल भी स्त्रियों के बलात्कार करते। इस प्रकार कुल और समाज से पतित इन अबलाओं का ठिकाना न रहा। तब अंग्रेजों ने जहाँ-जहाँ छावनियाँ थी वहाँ-वहाँ वैश्यालय खोल दिये जो स्त्री पति के साथ सती होना चाहती उसे रोका जाता और एक साथ कई-कई अंग्रेजों के द्वारा उसका मान मर्दन किया जाता, विचार करें तो यह सजा सती प्रथा से कम भयंकर न थी।

आप सभी को रानी पद्मिनी का इतिहास पता है। यदि वह सती न हुई होती तो खिलजी शैतान (अधिकतर मुस्लिम) के घिनौने कार्य का हमें भली-भॉती ज्ञान है। जो रानी पद्मिनी संग घटित होता। यह बात और है कि आज भी इन फिल्मकारों को अपने आप खिलजी में एक महान् योद्धा नजर आता है। जिसे पर्दे (फिल्म पद्मावती) पर दिखाकर यह लोग पद्मिनी के सतीत्व व जौहर का खुला अपमान कर रहे हैं।

मेरा मत- उरोक्त निबन्ध को पढ़कर कुछ पाठकों को शंका हो सकती है कि मैं सती का समर्थन हूँ। किन्तु मैं सती प्रथा का विरोधी हूँ और किसी भी दृष्टिकोण से सतीप्रथा (जौहर) का समर्थन नहीं करता। मैं तो केवल इतना प्रदर्शित करना चाहता हूँ कि प्रथा के अन्त का जो श्रेय अंग्रेजों को दिया जाता है वह उचित नहीं। उनका इसे रोकने का उद्देश्य कुछ और था। हालांकि इस सराहनीय कार्य (सतीप्रथा निषेध) में राजा राम मोहन और महर्षि दयानन्द (आर्यसमाज) जैसे भारतीय विद्वानों की महत्वपूर्ण भूमिका रही। किन्तु स्त्रियों की दशा में सुधार व इस प्रथा का वास्तविक अन्त आर्यसमाज द्वारा विधवा विवाह, पुनर्विवाह व स्त्री शिक्षा जैसे आन्दोलनों के फलस्वरूप हुआ है। केवल अंग्रेजों को इसका श्रेय देकर अंग्रेजी मानसिकता वाले भारतीयों द्वारा उनकी चाटुकारिता करना अनुचित है।

सच्चा मानवतावादी केवल आर्य ही होता है

–आचार्य वर्चस्पति(हिसार)

वर्त्तमान में पूरे विश्व की मानव जाति दो वर्गो में विभाजित है। एक वर्ग अपने आपको आस्तिक मानता है और दूसरा नास्तिक। **तथाकथित आस्तिक वर्ग भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों में बंटा हुआ है और प्रत्येक सम्प्रदाय अपने आपको सबसे बड़ा मानवतावादी मानता है, फिर भी परस्पर भेदभाव, लड़ाई-झगड़ा, मार-काट करते हैं इसलिए नास्तिक वर्ग उनको मानवतावादी न कहकर साम्प्रदायिक घोषित करता है।** आज हजारों युवकों ने साम्प्रदायिक झगड़ो से बचने के लिए तथाकथित मानवतावादी नास्तिक वर्ग को स्वीकार कर लिया है। ऐसे युवक ईश्वर, धर्म, यज्ञ-हवन, पूजा-पाठ, उपासना, योग, कर्मकाण्ड आदि के नाम से ही घृणा करने लगते हैं और मानवता के मानव से ही द्वेष भावना रखने लगते हैं। वास्तव में मानवता की परिभाषा क्या है? इसके विषय में आज का युवक दिग्भ्रमित है।

आज सैकड़ों संगठन मानवतावाद के प्रचार-प्रसार में संलग्न हैं लेकिन मानवता के विषय में उन सबकी परिभाषा अलग-अलग है। **यह एक विडम्बना ही है कि आज मानवता की प्रत्येक परिभाषा ने एक-एक सम्प्रदाय का रूप धारण कर लिया है।** ऐसे सम्प्रदाय मानवता के नाम पर मानव जाति का खुलकर शोषण कर रहे हैं। प्रतिदिन लाखों निर्दोष प्राणियों की हत्या करके, उसके मांस को खाने-वाले, जिहाद के नाम पर लाखों मनुष्यों को मौत के घाट उतारने वाले ईसाई-मुसलमान भी भावना का पूरा ढ़ोंग करते हैं। जिनकी मूल पुस्तक बायबिल और कुरान ही मानवता की घोर विरोधी हो तो उनके मानने वाले मानवतावादी कैसे हो सकते हैं?

राम रहीम और आसाराम बापू जैसे हजारों धर्म के ठेकेदार अपने अन्ध भक्तों को ईश्वर की उपासना से अलग करके अपनी-अपनी आरती उतरवाते हैं और मानव-मानव में फूट पैदा कर रहे हैं। क्या अलग-अलग गुरुओं की आरती उतारने वाला मानव परस्पर मानवता का व्यवहार कर सकता है? कभी नहीं। विश्व प्रसिद्धि के इच्छुक बाबागण और श्रीश्री रविशंकर जैसे लोग भी भिन्न-भिन्न विचारधाराओं के व्यक्तियों को योग के नाम पर हठयोग सिखाकर झूठी मानवता का प्रलाप कर रहे हैं। कुछ संन्यासी कन्या भ्रूण हत्या, एड्स रोग, और मजदूर शोषण का मूल कारण समाप्त किये बिना ही अपने आपको मानवतावादी प्रदर्शित करने का असफल प्रयास कर रहे हैं। आर्यसमाज में भी कुछ नैष्ठिक ब्रह्मचारी जानते-मानते हुये भी छल-कपट पूर्वक मानवता का गला घोंट रहे हैं।

दूसरी तरफ नास्तिक वर्ग के भी बहुत से संगठन मानवता की दुहाई देते रहते हैं। सारा कम्यूनिस्ट वर्ग संसार में अपने से अधिक किसी को भी मानवतावादी नहीं मानता। आजकल हरियाणा के विद्यालयों में ज्ञान-विज्ञान समिति और तर्कशील सोसायटी जैसी कम्यूनिस्ट विचारधारा की अनेक संस्थाएं आधुनिक विज्ञान का दुरुपयोग करके डार्विन के सिद्धान्त को आधार बनाकर विद्यार्थियों को झूठी मानवता का पाठ पढ़ाते हैं और धीरे-धीरे वे विद्यार्थी उस नास्तिक सम्प्रदाय के अन्ध भक्त बन जाते हैं। विश्व स्तर पर भी कई-कई देशों ने मिलकर अनेक मानवतावादी संस्थाएं बनाई हैं जैसे संयुक्त राष्ट्र संघ, मानवाधिकार आयोग आदि। देखने-सुनने में इन सब संस्थाओं का उद्देश्य एक बार तो ठीक-सा दिखाई देता है लेकिन ठोस प्रमाणों के आधार पर जब इनकी आन्तरिक गतिविधियों पर विचार करते हैं तो पता चलता है कि इन सब संस्थाओं के निर्माण में एक बहुत बड़ा कुटिल राजनैतिक स्वार्थ है जो मानवता के लिए सबसे अधिक खतरनाक है। मानवता की सच्ची परिभाषा से ये कोसों दूर हैं।

आओ! हम सब मिलकर विचार करें कि वास्तव में मानवता है क्या? मनुष्य और मानव ये दोनों शब्द एकार्थवाची हैं। इन दोनों शब्दों में **"मन ज्ञाने"** धातु है। जिससे मनुष्य का अर्थ बनता है कि जो ज्ञान पूर्वक अर्थात् सत्यसिद्धान्तों से युक्त होकर मनन करता है वही **"मनुष्य"** कहलाता है। केवल मनन करना मनुष्यपन नहीं बल्कि सत्य विद्या पूर्वक मनन करना मनुष्य का लक्षण है। मनन तो अपने स्तर पर सभी करते हैं लेकिन उनके पास सत्य सिद्धान्तों का आधार नहीं है तो वह निरर्थक है।

आर्य शब्द **"ऋगतौ"** से बनता है। गति के तीन अर्थ हैं **ज्ञान-गमन-प्राप्ति।** जो अर्थ मनुष्य और मानव का है वही अर्थ **"आर्य"** शब्द का है। मनुष्य, मावन और आर्य से सब पर्यायवाची हैं। वेद में **"मनुर्भव"** और **"कृण्वन्तोविश्वमार्यम्"** कहकर आदेश दिया है कि संसार को मनुष्य बनाओ, आर्य बनाओ। आर्य ही मानवतावादी हो सकता है क्योंकि करोड़ों वर्षो से आर्यों के सिद्धान्त वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित होने से सार्वभौमिक, सार्वकालिक तथा सर्वमान्य रहे हैं। पूरे विश्व में आर्यों का सार्वभौमिक चक्रवर्ती राज्य करोड़ों वर्षो तक रहा है। एक राजा अपराधी को कठोर से कठोर दण्ड देता है, मृत्यु दण्ड तक देता है परन्तु अपराधी के प्रति द्वेष भावना लेश मात्र भी नहीं होती। न्यायपूर्वक दण्ड देना ही मानवता है, क्षमा करना मानवता नहीं। आर्यसमाज का सातवाँ नियम मानवता की पूर्ण परिभाषा है- **सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्त्तना चाहिये।** प्रत्येक आर्य दोनों समय संध्या करता है और संध्या में प्रार्थना करता है कि **योऽस्मान् द्वेष्टि....** जो हमसे द्वेष करता है और हम जिससे द्वेष करते हैं वह सब द्वेष न्यायकारी परमात्मा के मुख में दग्ध अर्थात् नष्ट हो जाये। इसका अभिप्राय यही है कि एक आर्य मानवमात्र से ही नहीं प्राणिमात्र के साथ प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य व्यवहार करता है।

व्याकरण, दर्शन और वेद के प्रकाण्ड विद्वान ऋषि दयानन्द से बढ़कर वर्त्तमान में मानवता की परिभाषा कौन दे सकता है? सत्यार्थप्रकाश के अन्त में ऋषि लिखते हैं- **"मनुष्य उसी को कहना कि जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्यों के सुख-दुःख और लाभ-हानि को समझे। अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से डरता रहे।"** इससे बढ़कर एक व्यक्ति के लिए मानवता का और क्या लक्षण हो सकता है? मानवता का निर्वाहन तो मात्र आर्य सिद्धान्तों पर चलकर ही सम्भव है।

तथाकथित मानवतावादी कम्यूनिस्टों का इतिहास पक्षपात से भरा पडा है, यही हाल संयुक्त राष्ट्र संघ जैसे अन्य संगठनों का है। रामदेव और रविशंकर जैसे लोग डर के मारे अन्यायकारी ईसाई-मुसलमानों के झूठे सिद्धान्तों का खण्डन नहीं कर सकते हैं। झूठे सिद्धान्तों को सहन करना और झूठे सिद्धान्तों का प्रचार करना क्या मानवता की हत्या नहीं है? चाहे कोई व्यक्ति कितना ही धर्मात्मा, परोपकारी, श्रेष्ठ स्वभाव वाला हो लेकिन कुरान पर विश्वास न करने के कारण वह हत्या करने योग्य है क्या यही मानवता है?

इसलिए आर्यों और आर्याओ संगठित होकर आर्यकरण के इस अभियान में तन-मन-धन लगाओ, जल्दी से जल्दी लाखों, करोड़ों की संख्या में आर्यों की आवश्यकता हैं इसी से पूरा मानव समाज आर्यसमाज (श्रेष्ठ समाज) बन सकता है। तभी हम सब सुखी हो सकते हैं और आने वाली पीढ़ी भी। इति ओ३म्।

मनुर्भवः

-आचार्य सतीश

पिछले अंक से आगे-

वैज्ञानिक सोच व तार्किक प्रवृति से ही व्यक्ति धर्म को ठीक-ठीक समझने का सामर्थ्य प्राप्त करता है। धर्म के नाम पर वर्तमान सभी मतों में अनेकों प्रकार के क्रिया-कलाप और कर्मकाण्ड प्रचलित हैं, उनमें से कौन-कौन से कार्य धर्म से सम्बन्धित हैं और कौन-कौन से कार्य ऐसे हैं जो धर्म के विपरीत हैं। अगर यह जानने का सामर्थ्य एक व्यक्ति में नहीं है तो फिर वह व्यक्ति धर्म का पालन ठीक से कर पाने में सक्षम नहीं होता है और धर्म के नाम अधर्म करता चला जाता है तथा एक मनुष्य के रूप में अपने कर्तव्यों का ठीक से निर्वाह नहीं कर पाता है। अतः मनुष्य बनने के लिए आवश्यक है कि वह धर्म के नाम पर हो रहे शोषण से अपने आप को बचा सके और मनुष्य के कर्तव्य को समझकर सही अर्थों में मनुष्य बने। इस गुण का होना आवश्यक है मनुष्य बनने के लिए। धर्म व अधर्म का निर्णय करने की आवश्यकता केवल मनुष्य के लिए है अन्य जीवों के लिए नहीं। इससे मनुष्य के रूप में अपने कर्तव्यों की पूर्ति के लिए धर्म-अधर्म को ठीक से जानकर धर्म का पालन और अधर्म का परित्याग मनुष्य के लिए नितान्त आवश्यक है।

धर्म क्या है? संक्षेप में तो सत्य, न्याय और कर्तव्य पालन ही धर्म है, लेकिन सत्य, न्याय और कर्तव्य क्या है? इसको जानने का तो सबसे अच्छा माध्यम आर्य विद्या या आर्ष सिद्धान्त ही हैं, उनको जितना अधिक हम जानते चले जाएंगे उतना ही अधिक धर्म का ज्ञान हमें होता चला जाएगा।

पुरुषार्थी होना भी मनुष्यता का ही लक्षण है। मनुष्य के लिए पुरुषार्थ अनिवार्य है। वह भाग्यवाद के सहारे यदि बैठ जाता है तो अपने कर्तव्यों का पालन नहीं कर पाएगा। अतः अकर्मण्यता व भाग्यवाद मनुष्य के लिए नहीं अपितु पुरुषार्थ उसका गुण है। उसे पुरुषार्थी होना ही चाहिए। पुरुषार्थीहीन होना आलस्य को पैदा करता है और आलस्य मनुष्य के लिए अत्यन्त हानिकारक है। जब मनुष्य भाग्यवाद को नकार देता है और यह समझ जाता है कि भाग्यवाद का सिद्धान्त मेरे लिए हितकर नहीं है तो वह पुरुषार्थ के महत्व को समझ जाता है तथा तभी वह मनुष्य के रूप में अपने कर्तच्यों को निर्वाह कर पाता है। इसीलिए मानवोचित गुणों में यह भी आवश्यक है कि वह पुरुषार्थी हो, भाग्यवादी न हो तथा यह समझे कि पुरुषार्थ भाग्य से बड़ा है क्योंकि भाग्य भी पूर्वजन्म में किये पुरुषार्थ का ही फल है। पुरुषार्थ, भाग्य का निर्माता है अर्थात् जो बनाने वाला हो वह बड़ा। अतः पुरुषार्थ, भाग्य से बड़ा है। भाग्य निश्चित है और उसके नकारात्मक प्रभावों को वर्तमान के पुरुषार्थ से कम किया जा सकता है या सकारात्मक प्रभावों को और बढ़ाया जा सकता है। अब तक हमने मनुष्यों के तीन गुणों की चर्चा की है- 1) तार्किक सोच व वैज्ञानिक बुद्धि। 2) धर्म के नाम पर अन्धश्रद्धा से बचना। 3) भाग्यवाद के स्थान पर पुरुषार्थी बनना।

इनको धारण करके मनुष्य वेद में दी गई आज्ञा **मनुर्भवः** (मनुष्य बनो) का पालन करने में सफल होता है। अभी अगले अंक में कुछ और गुणों की चर्चा होगी जिससे हम पूर्णतया यह जान सकेंगे कि मनुष्य बनने के लिए किन-किन सिद्धान्तों का धारण करना हमारे लिए अनिवार्य है।

क्रमशः अगले अंक में.....

आर्य सिद्धान्त

विद्वान आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश व लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप सम्मित कर दें, पश्चात् वे स्वयं अपना हिताहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें। सत्यार्थप्रकाश में यह क्यों लिखा गया और इसके क्या निहितार्थ है, इसे समझने का प्रयास करते हैं।

आजकल के जो तथाकथित गुरु, बाबा, साधु-संत, धर्म के प्रचारक, कथाकार आदि अपने अनुयायियों को सिखाते है कि जो हम कह रहे हैं वही सत्य है और उसे धारण कर जीवन व्यतीत करो। अर्थात् हमने सत्य को जान लिया है और यही सत्य है इसी को अपनाओ, और जानने की आवश्यकता नहीं है। वे अपने अनुयायियों को चेला बनाते है न कि उन्हें विवेक देते है। जब्कि आर्य सिद्धान्त कहता है कि विद्वान् अपने शिष्यों को विवेक दें जिससे वह सत्य व असत्य को जान सकें। विद्वान का कार्य सत्य और असत्य को जना देना है, उसका स्वरूप बता देना है कि यह सत्य है और यह असत्य है, निर्णय लेने का कार्य व्यक्ति का स्वयं का है यदि वह आनन्द व सुख चाहता है तो सत्य को ग्रहण करे और असत्य को छोड़ देवे, और यदि ऐसा नहीं करेगा तो दुःख उठावेगा, आर्य सिद्धान्त में किसी को भेड़ चाल से नहीं चलाया जाता है कि जैसा एक करे वैसा ही दूसरे उसके पीछे-पीछे बिना विचारे करते रहें। अपितु प्रत्येक को स्वयं विचार करना होता है, विवेक प्राप्त करना प्रत्येक के लिए आवश्यक है। उसे अपने विवेक से निर्णय लेने का अधिकार है। विद्वान का कार्य तो उसे सत्य व असत्य का यथार्थ ज्ञान कराना है। निर्णय का कार्य प्रत्येक मनुष्य का है, प्रत्येक को विवेकशील बनाना आर्य सिद्धान्तो का कार्य है और जब व्यक्ति विवेकशील हो जाता है तो वह निर्णय लेने में सक्षम हो जाता है।

संध्या काल

माघ मास, शिशिर ऋतु, कलि-5118, वि. 2074
(3 जनवरी 2018 से 31 जनवरी 2018)
प्रातः कालः 5 बजकर 45 मिनट से (5.45 A.M.)
सांय कालः 6 बजकर 45 मिनट से (6.45 P.M.)

फाल्गुन मास, वसंत ऋतु, कलि-5118, वि. 2074
(1 फरवरी 2018 से 1 मार्च 2018)
प्रातः कालः 6 बजकर 15 मिनट से (6.15 A.M.)
सांय कालः 6 बजकर 30 मिनट से (6.30 P.M.)

ओ३म्

राष्ट्रीय आर्यनिर्मात्री सभा

सूचना

आर्य गुरुकुल महाविद्यालय

स्थान : सांगोपांग वेदविद्यापीठ, आर्ष गुरुकुल टटेसर-जौन्ती, दिल्ली-81

आर्य प्रचारक कक्षा

दिल्ली में होने वाली वर्तमान वर्ष की आर्य प्रचारक कक्षाओं की समय सारणी इस प्रकार है-

1) प्रथम सत्र की कक्षा 21-22 अक्टुबर 2017 को संपन्न हो चुकी है।

2) दूसरे सत्र की कक्षा 09-10 दिसम्बर 2017 को संपन्न हो चुकी है।

3) तीसरे सत्र की कक्षा 13-14 जनवरी 2018 को होगी।

4) चतुर्थ सत्र की कक्षा 01-02 मार्च 2018 को होगी।

जो भी प्रचारकगण दिल्ली में पंजीकृत हैं व दिल्ली में कक्षा कर रहे हैं वे सभी इन तिथियों पर कक्षा में उपस्थित हों।

-आचार्य सतीश

सम्पर्क - 9350945482

विद्वान आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश व लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप सममिंत कर दें, पश्चात् वे स्वयं अपना हिताहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें। -सत्यार्थप्रकाश (भूमिका)

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा आयोजित दो दिवसीय सत्रों व सभा से सम्बन्धित नवीन जानकारी सभा की बेवसाईट-

www.aryanirmatrisabha.com

पर उपलब्ध है। अत: आप वहाँ से जानकारी ले सकते हैं। यह पत्रिका भी प्रत्येक मास दिनांक 10 को सभा की बेवसाईट पर डाल दी जाती है अत: पत्रिका को पढ़ने के लिए साईट के लिंक

www.aryanirmatrisabha.com/पत्रिका पर जाएं।

03 जनवरी-31 जनवरी-2018 **माघ** ऋतु- शिशिर

सोमवार	मंगलवार	बुधवार	गुरुवार	शुक्रवार	शनिवार	रविवार
		पुनर्वसु/पुष्य कृष्ण द्वितीया 3 जनवरी	आश्लेषा कृष्ण तृतीया 4 जनवरी	मघा कृष्ण चतुर्थी 5 जनवरी	पू० फाल्गुनी कृष्ण पंचमी 6 जनवरी	उ० फाल्गुनी कृष्ण षष्ठी 7 जनवरी
हस्त कृष्ण सप्तमी 8 जनवरी	चित्रा कृष्ण अष्टमी 9 जनवरी	स्वाती कृष्ण नवमी 10 जनवरी	विशाखा कृष्ण दशमी 11 जनवरी	विशाखा कृष्ण एकादशी 12 जनवरी	अनुराधा कृष्ण द्वादशी 13 जनवरी	ज्येष्ठा कृष्ण त्रयोदशी 14 जनवरी
मूल कृष्ण चतुर्दशी 15 जनवरी	पूर्वाषाढ़ा कृष्ण अमावस्या 16 जनवरी	उत्तराषाढ़ा कृष्ण अमावस्या 17 जनवरी	श्रवण शुक्ल प्रतिपदा 18 जनवरी	धनिष्ठा शुक्ल द्वितीया 19 जनवरी	शतभिषा शुक्ल तृतीया 20 जनवरी	पूर्वाभाद्रपदा शुक्ल चतुर्थी 21 जनवरी
उत्तराभाद्रपदा शुक्ल पंचमी 22 जनवरी	उत्तराभाद्रपदा शुक्ल षष्ठी 23 जनवरी	रेवती शुक्ल सप्तमी 24 दिसम्बर	अश्विनी शुक्ल अष्टमी 25 जनवरी	भरणी/कृतिका शुक्ल नवमी 26 जनवरी	रोहिणी शुक्ल दशमी 27 जनवरी	मृगशिरा शुक्ल एकादशी/ द्वादशी 28 जनवरी
आर्द्रा शुक्ल त्रयोदशी 29 जनवरी	पुनर्वसु शुक्ल चतुर्दशी 30 जनवरी	पुष्य शुक्ल पूर्णिमा 31 जनवरी	सुभाष जयन्ती 23 जनवरी			

Rishi Dayanand - His Life And Work -Saroj Arya, Delhi

It was courage of Dayanand only that he challenged a king, because he was such a Sanyasi who didn't compromise truth- whole of his life. Then he went to Jaipur, where, as usual, he delivered sermons and held discussions. He accepted many challenges for debate, but where it came to actual discussion, the challengers turned back. The Swami's presence itself was sanctifying, and many people who came to hear him went back, feeling dignified for having been in his company.

In 1866, the Swami went to Ajmer, where he started a vigorous denunciation of idol-worship. He told people about ill-effects of idol worship and many social evils degrading our society. His outspoken utterances and his masterly exposition of the doctrines of Hindu Religion attracted large audiences. He issued challenges, and discussed to his antagonists. One of them was Rev. Mr. Robinson, who became a great admirer of Swami after the discussion. He praised, "Swami is profoundly versed in Vedas. I have never seen so learned a man in my entire life. Such individuals are rare in the world and their company can be productive to all." The Swami called upon Mr. Davidson, the commissioners of Ajmer and urged him the necessity of eradicating social evils by legislation. The reply of the latter was that the Government was not prepared to interfere in matters related to religion. He approached the Agent to the Governor-General with a request to stop cow-killing in India, setting forth in detail the consequences. The Agent intimated him his regret that he was unable to do anything in the matter.

The Kumbh Fair of Hardwar was approaching and Dayanand thought it was a magnificent opportunity for him to preach his doctrines. He, therefore, with three or four followers of his went to Hardwar, and took up his abode in a temporary shed which was put up about three miles from the town. It was a month before the actual date of the fair. Thousands of Hindus of all faiths were pouring in every day, and Dayanand had time enough to observe things. Here he saw Puranic Hindhism at its worst. His experience had already shown him enough of the ignorance that prevailed, but this visit there was an eye-opener. The fair was a sad spectacle of the dark and false side of religion displayed in with all nakedness. So much of idol-worship, of fraud practiced on blind innocent people, of depravity, he had never seen before. His heart ached at the sight he saw every day.

It was here that Dayanand realised the enormity of the task before him. But undaunted he unfurled his war flags, Pakhand Khandani Pataka (flange of war against hypocrisy) and began speaking against idolatry and other evil practices in the name of religion and spirituality he had witnessed. Such a vehement denunciation of idol-worship, the huge fraud of pilgrimages, Puranic belief and similar conventional creeds at Hardwar, their very stronghold was an uncommon sight. There was a commotion, and Dayanand was the centre of talk of the huge gathering. High and low, rich and poor, impelled by curiosity flocked to his place and listened to him with dump surprise. Some returned with their faiths shaken, others half-confused, still others indignant with the Pandas whose vital interest was adversely affected by the vigorous onslaughts of Dayanand. It was a chellenge to the demon of superstition in his den. But Dayanand took the challenge and jumped into the den. He fought for whole of his life and sacrifice himself for the same. A counter-campaign was started to decry the Swami and his teachings.

To be continued...

द्विदिवसीय आर्य/आर्या प्रशिक्षण के बाद सत्रार्थियों के अनुभव

सत्य का ज्ञान, वेदों की शिक्षा के ज्ञान का अनुभव होना, आत्मा का अजर-अमर व उसका बहुत सूक्ष्म रूप में पता होना तथा झुठे आडम्बरों को छोड़कर सत्य की तरफ जागृति आना! यहाँ के आचार्यों से प्रत्यक्ष ज्ञान का होना। जिससे मैं बहुत परे थी। अब मैं अपने पति रिंकल आर्य के साथ लगकर वेदों के बारे में उनसे पूर्ण जानकारी प्राप्त करुंगी और अभी तक अपने इतिहास की कोई जानकारी नहीं थी! आज पता चला की मैं आर्या हूँ! और अपने इतिहास के बारे में पूर्ण जिज्ञासा जाग गई। तथा ईश्वर एक है। उसके सर्वत्र, चेतन, सर्वव्यापक, निराकार, सर्वशक्तिमान जैसे नामों को जाना है।

मैं अपने पति रिंकल आर्य के साथ मिलकर राष्ट्र के कामों में सहयोग करुंगी व अपने भारत में ज्यादा से ज्यादा लोगों को आर्या बनाने की कोशिश करुंगी और उनके साथ मिलकर जो भी मन के संशय हैं उनको दूर करुंगी।

नाम: कीर्तिका, आयु: 26 वर्ष, योग्यता: एम. ए., पता: करनाल, हरियाणा।

यह मेरे लिए एक शानदार ज्ञानप्रद सीखने वाला सत्र था। इस सत्र में काफी कुछ सिखाया और निश्चित रूप से सोचने पर मजबूर किया। राष्ट्र-चिन्तन और सामाजिक बुराईयों के प्रति नई ज्ञानप्रद बातों का श्रवण हुआ। काफी कुछ चीजें भी जिनका भ्रम जीवन भर बना रहा, आज उससे पर्दा उठा। हम कौन थे, क्या थे और आज हमारी क्या स्थिति है, इससे मैं अवगत हुआ।

कुल मिलाकर यह मेरे लिए शिक्षाप्रद, राष्ट्रभक्ति से युक्त चिन्तन योग्य सत्र रहा है। जितना मुझे चिन्तन सत्र में मिला है उसे देखते हुए मैं अधिक से अधिक और लोगों को भी इस धारा मे जोड़ने हेतु प्रेरित करना चाहूँगा।

नाम: लोकेन्द्र बहुगुणा, आयु: 32 वर्ष, योग्यता: स्नातक, पता: डिहराइन, उत्तराखण्ड।

मेरा ये अनुभव रहा कि मेरे विचारो में दृढ़ता आयी है क्योंकि मैं एक आर्य परिवार से हूँ, आर्य समाज से भी जुड़ा हूँ लेकिन इन दो दिनों में अपने आर्यावर्त को, अपनी ज्ञान की भूमी व वेद ज्ञान के विषय में श्रेष्ठ जानकारी प्राप्त की, ऋषि-मुनियों व आचार्यों के कारण अपने जीवन में क्या परिवर्तन लाया जा सकता है यह इन दो दिनों में सीखा है और अपने आपको पूर्ण रूप से समर्पित करने का, अपने चित्त को साफ करने, अपने आप को बचाने व फिर से आर्यावर्त देश बनाने का संकल्प लिया हूँ। अपने आपको, परिवार को, मित्रों को, राष्ट्र को इस आर्यावर्त के सूत्र में बांधने का मैं संकल्प अपने आप से लेता हूँ। बहुत कष्ट हुआ मूझे जो मैंने आज तक पढ़ा किताबों में अपनी शिक्षा में सोचने पर मजबूर हुआ कि गुरुकुल में क्यों नहीं पढ़ पाया। धन्यवाद आचार्य जी। आर्थिक व शारीरिक सहयोग आर्य निर्माण के महान् कार्य में दूंगा।

नाम: पवन कुमार, आयु: 34 वर्ष, योग्यता: बी.एड., पता: नजीबाबाद, बिजनौर, उत्तर प्रदेश।

दो दिन का सत्र लगाकर जिन बातों की जानकारी नहीं थी वो जानकारी प्राप्त की। इस सत्र में हमें वेदों के बारे में बताया गया। जिसके बारे में हमें स्कूल और कॉलेजों में नहीं बताया गया और उसको अपने परिवार वालों को भी समझाने की कोशिश करुंगी। सबसे अनुभव लगा वो है कि अंधविशवास से मुक्त रहें और दूसरों को रखने की कोशिश करुंगी।

मैं इसमें यह सहयोग दे सकती हूँ कि महिलाओं को इसके लिए प्रेरित कर सकती हूँ ताकि ज्यादा से ज्यादा महिलाओं को आर्यों की शिक्षा दे सकें और राष्ट्र की रक्षा कर सकें।

नाम: संगीता, आयु: 28 वर्ष, योग्यता: स्नातक, पता: गांव बदरपुर, करनाल, हरियाणा।

राष्ट्र व्यापी आर्य निर्माण

सिहोर (मध्यप्रदेश) में आर्य निर्माण सत्र में आचार्य राजेश जी

राष्ट्रीय आर्य निर्मात्री सभा द्वारा आर्य निर्माण कार्य भले ही कुछ क्षेत्रों में अधिक गति से हो रहा हो, लेकिन सभा पूरे भारतवर्ष में आर्य निर्माण करने में न केवल प्रयासरत है अपितु सक्षम भी है। दिल्ली, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, राजस्थान के अलावा देश के अनेक राज्यों जैसे पूर्वान्चल, बिहार, महाराष्ट्र, गुजरात, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़ आदि राज्यों में सत्रों के माध्यम से आर्य विद्या लोगों तक पहुचाने का कार्य आर्य निर्मात्री सभा द्वारा किया गया है। इसी प्रयास में दूरस्थ क्षेत्रों में जब भी आर्य विद्या देने का अवसर आता है तो निर्मात्री सभा के प्रवक्ता व आचार्य सहर्ष अनेक बाधाओं के होते हुए भी इन क्षेत्रों में जाते हैं, आर्य विद्या देकर लोगों को आर्य बनाते हैं। इसी कड़ी में अभी 6-7 जनवरी को सिहोर, मध्यप्रदेश में आर्य विद्या हेतु सत्र का आयोजन किया गया और इसी माह 27-28 जनवरी को नवादा-बिहार में सत्र का आयोजन किया जा रहा है इन क्षेत्रों में पहले भी आर्य निर्माण का कार्य हुआ है। हर प्रकार की बाधाओं के होते हुए भी हम जन-जन तक आर्य विद्या को पहुँचाने के लिए कृतसंकल्प हैं।

आर्य निर्माणशाला में विभिन्न स्थानों पर निर्मात्री सभा के आचार्यों द्वारा आर्य व आर्या निर्माण

स्वामी व प्रकाशक आचार्य हनुमत्प्रसाद द्वारा सांगोपांगवेद विद्यापीठ, आर्ष गुरुकुल, टटेसर-जौन्ती, दिल्ली-81 से प्रकाशित

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् - समाचार पत्र मे छपे लेखों तथा विचारों से सम्पादक का पूर्णतया सहमत होना आवश्यक नहीं है। क्योंकि अनवधानतावश त्रुटि एवं मतभिन्न होना सम्भव है। सभी न्यायिक विवाद दिल्ली में निपटाये जाएंगे।